

राजस्थान उच्च न्यायालय

जयपुर बेंच

एस.बी. क्रिमिनल अपील संख्या 90/1992

गुलाम मोहम्मद पिता गुलाम रसूल (गुलाम हुसैन), निवासी फूटा खुड्डा, पुलिस थाना रामगंज,
जयपुर, वर्तमान में सेंट्रल जेल, जयपुर में उपस्थित

----अपीलकर्ता

बनाम

राजस्थान राज्य, सरकारी अधिवक्ता के माध्यम से

----प्रतिवादी

अपीलकर्ता(ओं) के लिए	:	श्री सुधीर जैन, अधिवक्ता, श्री पार्थ शर्मा, अधिवक्ता के साथ
प्रतिवादी (ओं) के लिए	:	श्री इमरान खान, लोक अभियोजक

माननीय श्री. जस्टिस अनुप कुमार ढांड

निर्णय

आरक्षित किया गया	:	09/05/2024
उच्चारित किया गया	:	20/05/2024

प्रकाशनीय

व्याख्या की सुविधा के लिए, यह निर्णय निम्नलिखित भागों में विभाजित किया गया है :-

अनुक्रमणिका

(1) तथ्यात्मक संरचना.....	2
(2) अभियोजन का मामला.....	2
(3) अपीलकर्ता की ओर से पक्ष प्रस्तुतिकरण.....	3
(4) लोक अभियोजक द्वारा पक्ष प्रस्तुतिकरण.....	5
(5) विश्लेषण एवं चर्चा.....	5
(6) संबंधित मुद्दे पर निर्णयों की विधिक स्थिति.....	11
(7) निष्कर्ष.....	17
(8) निर्देश.....	18

तथ्यात्मक संरचना :-

1. इस अपीलकर्ता द्वारा, यहाँ विवादित निर्णय दिनांक 27.02.1992, जो विशेष न्यायाधीश, सती निवारण एवं अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, जयपुर सिटी, जयपुर द्वारा सत्र प्रकरण संख्या 1/1991 में पारित किया गया था, को प्रश्नांकित किया गया है, जिसके द्वारा अभियुक्त-अपीलकर्ता (आगे 'अपीलकर्ता' के रूप में संदर्भित) को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अंतर्गत दंडनीय अपराध का दोषी मानते हुए सात वर्ष के कठोर कारावास तथा ₹500/- के अर्थदंड से दंडित किया गया है, और अर्थदंड की अदायगी न करने की स्थिति में, अतिरिक्त दो माह के साधारण कारावास की सजा दी गई है।

2. विवरणों को छोड़ते हुए, अपील निस्तारण हेतु प्रासंगिक एवं आवश्यक तथ्य नीचे उल्लिखित किए जा रहे हैं।

अभियोजन का मामला:-

3. पी पीडब्लू-1 'आर' ने पुलिस स्टेशन रामगंज, जयपुर शहर, जयपुर में प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफ.आई.आर.) (एक्स.पी-1) दर्ज कराई है, जिसमें आरोप लगाया गया है कि उसका दूसरा विवाह गुलाम मोहम्मद के साथ विशेष विवाह अधिनियम के तहत हुआ था। स्वर्गीय रामपाल के साथ पहले विवाह से मीना के दो बच्चे हुए। बेटे 'के' की उम्र 18 वर्ष और बेटी 'एस' की उम्र 13 वर्ष है। दो वर्ष पहले, वह गोधा भवन गई और कुछ दिनों तक वहीं रही। उसकी अनुपस्थिति का लाभ उठाकर, उसके पति गुलाम मोहम्मद ने उसकी बेटी के साथ बलात्कार किया। एक महीने पहले, उसकी बेटी ने उसे बताया कि गुलाम मोहम्मद ने उसके साथ तीन बार बलात्कार किया और यही कृत्य सईद आदि के घर पर भी किया गया।

4. इस रिपोर्ट के आधार पर, अपीलकर्ता के विरुद्ध धारा 376 आईपीसी के अंतर्गत प्राथमिकी दर्ज की गई और जाँच के बाद, अपीलकर्ता के विरुद्ध धारा 376 आईपीसी के अंतर्गत आरोप-पत्र दायर किया गया और उसी अपराध के लिए आरोप निर्धारित किया गया। अपीलकर्ता ने आरोप से इनकार किया और मुकदमे की माँग की। अभियोजन पक्ष ने पाँच गवाहों से पूछताछ की। इसके बाद, अपीलकर्ता ने धारा 313 सीआरपीसी के अंतर्गत अपने स्पष्टीकरण में स्वयं को निर्दोष बताया, लेकिन बचाव में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया। मुकदमा पूरा होने के बाद, निचली अदालत ने उसे दोषी पाया और ऊपर बताए अनुसार उसे दोषी ठहराया और सजा सुनाई।_

अपीलकर्ता की ओर से प्रस्तुतिकरण:-

5. अपीलकर्ता के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि एफआईआर (प्रद.पी-1) अभियोजिका की माता द्वारा दर्ज कराई गई, जिसमें अपीलकर्ता पर तीन अलग-अलग अवसरों पर उसकी बेटी के

साथ बलात्कार करने के आरोप लगाए गए हैं। अधिवक्ता का कहना है कि एफआईआर के अनुसार, पहली घटना एफआईआर की तारीख से दो वर्ष पूर्व घटित हुई थी और एफआईआर दर्ज कराने में हुई देरी के लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है। अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया कि जब अभियोजन की माता 'आर' (पीडब्ल्यू-1) के बयान विचारण के दौरान दर्ज किए गए, तो उन्होंने अभियोजन के पक्ष का समर्थन नहीं किया और उन्हें विरोधी घोषित कर दिया गया। अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि अभियोजन की पुत्री 'एस' (पीडब्ल्यू-2) के बयान में अपराध के संबंध में कई विरोधाभास हैं। अधिवक्ता का कहना है कि एक घटना की जानकारी अभियोजन की माता की उपस्थिति में दी गई है। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अभियोजन की इस प्रकार की कहानी एवं अभियोजन पक्ष के आरोप विश्वसनीय नहीं हैं। अधिवक्ता का यह भी कहना है कि अभियोजन पक्ष के आरोपों की चिकित्सकीय साक्ष्य द्वारा पुष्टि नहीं होती, जबकि चिकित्सकीय परीक्षण के समय अभियोजिका का मेडिको लीगल रिपोर्ट (एमएलआर) (प्रद.पी-7) तैयार किया गया। अधिवक्ता ने कहा कि अभियोजिका के निजी एवं बाहरी अंगों पर कोई चोट नहीं पाई गई और डॉक्टर बलात्कार के विषय में निश्चित नहीं था। अतः, योनि स्वाब विश्लेषण हेतु फॉरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला (एफएसएल) भेजा गया, किंतु अभियोजन पक्ष रिकॉर्ड पर एफएसएल की उक्त रिपोर्ट प्रस्तुत करने में असफल रहा है जिससे अपीलकर्ता को कथित घटना से जोड़ा जा सके। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि जब जाँच अधिकारी का बयान दर्ज किया गया, तो उसने स्वीकार किया कि एफआईआर पुलिस थाने द्वारा 22.06.1990 को प्राप्त की गई थी, किंतु रिपोर्ट 02.07.1990 को दर्ज की गई, और घटना स्थल का कोई नक्शा तैयार नहीं किया गया। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अभियोजन पक्ष स्वयं घटना के स्थल के संबंध में स्पष्ट

नहीं है कि घटना कहाँ हुई थी। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि राजेन्द्र गोधा के कहने पर अपीलकर्ता के विरुद्ध यह झूठा मामला दर्ज कराया गया, किंतु अभियोजन पक्ष इस महत्वपूर्ण गवाह की जाँच करने में असफल रहा। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि जब डॉ. मंजू शर्मा (पीडब्ल्यू-5) का बयान दर्ज किया गया, तो उन्होंने अपनी जिरह में स्वीकार किया कि अभियोजिका का हाइमेन चोट लगने के कारण फट सकता है। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि गवाहों के बयानों में कई विरोधाभास हैं, जिससे मुकम्मल अभियोजन पक्ष की कहानी पर गंभीर संदेह उत्पन्न होता है। अतः, उपरोक्त परिस्थितियों में, विचारण न्यायालय ने आरोपित अपराध में अपीलकर्ता को दोषी मानते हुए त्रुटि की है और विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय विधि की दृष्टि में टिकाऊ नहीं है तथा अपीलकर्ता दोषमुक्त किए जाने योग्य है। अपने तर्क के समर्थन में, अपीलकर्ता के अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर निर्भरता रखी है:-

(I) रामदास एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, ए आई आर (सुप्रीम कोर्ट) 155, वर्ष 2007 में प्रकाशित;

(II) सुताराम @ रामजीलाल बनाम राजस्थान राज्य, 2010(2) आरएलडब्ल्यू 1507 में प्रकाशित;

(III) राज्य बनाम मधु पुरी एवं अन्य (एस.बी. क्रिमिनल लीव टू अपील संख्या 4/2010, निर्णय दिनांक 06.02.2012) 2012(3) आरएलडब्ल्यू 2714 में प्रकाशित।

लोक अभियोजक की ओर से प्रस्तुतिकरण:-

6. विपरीत रूप से, माननीय लोक अभियोजक ने अपीलकर्ता के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया और प्रस्तुत किया कि अभियोजिका 'एस' की उम्र मात्र 13 वर्ष होने के

कारण यह विश्वास नहीं किया जा सकता कि वह अपने सौतेले पिता पर झूठा आरोप लगाएगी। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यह तथ्य होने के बावजूद कि एफआईआर अभियोजिका की माता द्वारा दर्ज कराई गई थी और वह शत्रु पक्ष घोषित हो गई, फिर भी अभियोजिका ने अपीलकर्ता के विरुद्ध उसके साथ हुई घटना के संबंध में बयान देने का साहस किया। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अभियोजिका की मेडिकल रिपोर्ट के अनुसार उसका हाइमेन टूटा हुआ पाया गया। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता जैसी नाबालिग बच्ची का हाइमेन ऐसी घटना घटित हुए बिना नहीं फट सकता। अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया कि ऐसे मामलों में विलंब कोई महत्वपूर्ण बात नहीं है जबकि आरोप अभियोजिका के सौतेले पिता के विरुद्ध लगाए गए हैं। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि रिकॉर्ड पर उपलब्ध समस्त साक्ष्य के मद्देनजर, विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अंतर्गत दंडनीय अपराध में अपीलकर्ता को दोषी ठहराने में कोई त्रुटि नहीं की गई है। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय न्यायिक दृष्टि से न्यायसंगत, सुसंगत तथा सुविचारित है, जिसमें इस न्यायालय द्वारा कोई हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है।

विक्षेपण एवं चर्चा :-

7. बार में प्रस्तुत पक्षों को सुना गया और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया गया।
8. पीडब्ल्यू-1 'आर' के बयान का अध्ययन करने पर, जो अभियोजिका की माता है, जिनके कहने पर पूरी जांच प्रक्रिया प्रारंभ हुई थी, देखा गया कि उन्होंने स्वयं अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन नहीं किया और उन्हें शत्रु पक्ष घोषित कर दिया गया।

9. पीडब्ल्यू-2 'एस' ने बयान दिया कि उसकी माता पीडब्ल्यू-1 'आर'अपने भाई से मिलने चली गई थी और वह घर पर थी, जहाँ अभियुक्त ने उसके साथ बलात्कार किया। फिर वे एक नए किराए के मकान में रामगंज शिफ्ट हो गए, वहाँ भी अभियुक्त ने उसके साथ बलात्कार किया और अभियुक्त ने उसे कहा कि इस घटना के बारे में अपनी माँ को न बताए, जिसके कारण वह चुप रही। कुछ दिनों बाद, फिर अभियुक्त ने वर्षा ऋतु में, जब उसकी माँ सो रही थी, उसके कपड़े उतारने की कोशिश की। जिरह में, इस गवाह ने स्वीकार किया कि घटना उसके साथ दो साल पहले घटी थी, जो कि उसकी माँ द्वारा एफआईआर दर्ज कराने से एक माह पहले थी। उसने यह भी कहा कि कई बार अभियुक्त ने उसकी माँ की मौजूदगी में, जब वह माँ सो रही थी, वही प्रयास किया। जिरह में उसने यह भी कहा कि बलात्कार की घटना उसके घर, जो छोटी चौपड़ में स्थित है, वहीं हुई, फिर उसने अपना बयान बदला और कहा कि यह घटना किशनपोल वाले घर में हुई। उसने अपनी जिरह में यह भी स्वीकार किया कि घटना के दो साल बाद तक वह चुप रही, और उसके बाद उसने पुलिस को बलात्कार की घटना के बारे में बताया। उसने इस सुझाव को नकार दिया कि रिपोर्ट राजेन्द्र गोधा के कहने पर दर्ज कराई गई थी।

10. जांच अधिकारी विश्वंभरी दयाल (पीडब्ल्यू-3) ने मामले की जांच की और गवाहों के बयान लिए एवं गिरफ्तारी पंचनामा (प्रद.पी-3) के तहत अपीलकर्ता को गिरफ्तार किया तथा अभियोजिका का चिकित्सकीय परीक्षण डॉक्टर से करवाया और उसका योनि स्वाब विश्लेषण हेतु एफएसएल भेजा, जिसकी रसीद (प्रद.पी-4) है।

अपनी जिरह में, उन्होंने स्वीकार किया कि यद्यपि रिपोर्ट (प्रद.पी-1) उन्हें 26.06.1990 को प्राप्त हुई थी, लेकिन वह प्राक्-जांच के लिए लंबित रखी गई और एफआईआर 02.07.1990

को दर्ज की गई, जबकि सूचना देने वाली/शिकायतकर्ता 'आर' के बयान 01.07.1990 को दर्ज किए गए। उन्होंने स्वीकार किया कि जांच के दौरान यह तथ्य सामने आया कि सूचना देने वाली 'आर' राजेन्द्र गोधा के निवास पर रह रही थी, लेकिन उनके बयान दर्ज नहीं किए गए। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि घटनास्थल का कोई नक्शा उन्होंने तैयार नहीं किया क्योंकि इसकी कोई आवश्यकता नहीं थी और वह घटनास्थल पर नहीं गए, जबकि अभियोजिका द्वारा आरोपित घटनाओं के स्थान पर बलात्कार किए जाने की बात कही गई थी।

11. दंड प्रक्रिया संहिता अथवा आपराधिक न्यायशास्त्र के अंतर्गत कोई ऐसा प्रावधान नहीं है कि बलात्कार या किसी अपराध की किसी रिपोर्ट को पूर्व जांच के लिए लम्बे समय तक लंबित रखा जाए और एफआईआर दर्ज करने से पहले ही बयान दर्ज किया जाए। इस प्रकरण में, एफआईआर (प्रद.पी-1) 02.07.1990 को दर्ज की गई, जबकि सूचना देने वाले 'आर' का बयान 01.07.1990 को प्रद.पी2 के तहत दर्ज किया गया। इस जांच अधिकारी द्वारा की गई विवेचना इतनी त्रुटिपूर्ण है कि घटनास्थल का कोई नक्शा तैयार नहीं किया गया, जिससे अभियोजन पक्ष का यह मामला प्रमाणित हो सके कि अभियोजिका 'एस' के साथ कथित रूप से घटनास्थलों पर बलात्कार हुआ था।

12. पुलिस बयान (प्रद.पी2) का दर्ज होना, जो पीडब्ल्यू-1 'आर' का था, जांच अधिकारी (आई.ओ.) विश्वंभर दयाल (पीडब्ल्यू-3) द्वारा 01.07.1990 को, अर्थात् एफआईआर (प्रद.पी-1) दर्ज कराने से पूर्व, काफी आश्चर्यजनक है क्योंकि विधि की प्रक्रिया 02.07.1990 को सामने आई, जब एफआईआर धारा 154 सीआरपीसी के तहत दर्ज की गई। यहां तक कि बलात्कार की गंभीर घटना, जिसमें दो-तीन अलग-अलग स्थानों पर घटना घटित हुई थी, वहां भी जांच

अधिकारी ने किसी भी घटनास्थल का नक्शा तैयार नहीं किया और न ही अभियोजिका 'एस'(पीडब्ल्यू-2) और सूचना देने वाली/शिकायतकर्ता 'आर'(पीडब्ल्यू-1) को घटनास्थल पर ले जाकर वहां घटनाओं के होने की पुष्टि करवाई। जब इस जांच अधिकारी से उसके ऐसे निष्क्रियता के बारे में जिरह में पूछा गया, तो उसने उत्तर दिया कि “उसे घटनास्थल का नक्शा तैयार करना और अभियोजिका को घटनास्थल पर ले जाना उचित और आवश्यक नहीं लगा।” इस प्रकार की कार्रवाई आई.ओ. द्वारा अधिकारों के दुरुपयोग की श्रेणी में आती है। इस न्यायालय को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि विचारण न्यायालय ने इस अहम पहलू को नज़रअंदाज़ कर दिया है। स्वतंत्र गवाह राजेन्द्र गोधा की जांच इस जांच अधिकारी द्वारा नहीं की गई। अतः अभियोजन पक्ष के मामले की सच्चाई पर गंभीर संदेह उत्पन्न होता है।

13. अभियोजिका की उम्र जानने के लिए उसका चिकित्सकीय परीक्षण डॉ. विवेकानंद गोस्वामी (पीडब्ल्यू-4) द्वारा किया गया, जिन्होंने एक्स-रे रिपोर्ट (प्रद.पी-6) के आधार पर यह राय दी कि उसकी उम्र 12 से 14 वर्ष थी। अपनी जिरह में उन्होंने स्वीकार किया कि अभियोजिका की उम्र में दो वर्ष ऊपर-नीचे का अंतर हो सकता है और यह 10 वर्ष या 16 वर्ष भी हो सकती है।

14. अभियोजिका 'एस' (पीडब्ल्यू-2) का चिकित्सकीय परीक्षण डॉ. मंजू शर्मा (पीडब्ल्यू-5) द्वारा 03.07.1990 को किया गया और उन्होंने उसकी मेडिकल रिपोर्ट (प्रद.पी-7) तैयार की तथा उसके शरीर के निजी और बाहरी हिस्सों पर कोई चोट नहीं पाई गई। उसके हाइमेन को फटा हुआ पाया गया और वह कुंवारी नहीं मानी गई। रासायनिक रिपोर्ट के अभाव में उसने बलात्कार के संबंध में कोई राय नहीं दी।

अपनी जिरह में, उसने स्वीकार किया कि आमतौर पर 11 वर्ष की लड़की का हाइमेन सुरक्षित रहता है और यदि संबंध बने तो हाइमेन से रक्तस्राव हो सकता है। हाइमेन किसी चोट लगने के कारण भी फट सकता है। वह यह बताने में असमर्थ रही कि अभियोजिका का हाइमेन कैसे फटा।

15. मेडिकल रिपोर्ट (प्रद.पी-7) और मेडिकल ऑफिसर डॉ. मंजू शर्मा (पीडब्ल्यू-5) के बयानों के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि अभियोजिका 'एस'(पीडब्ल्यू-2) के शरीर के निजी और बाहरी हिस्सों पर कोई चोट नहीं पाई गई तथा रासायनिक रिपोर्ट अर्थात फॉरेंसिक साइंस रिपोर्ट (एफएसएल) के अभाव में बलात्कार के संबंध में कोई राय नहीं दी गई।

यह उल्लेखनीय है कि अभियोजिका 'एस' का वैजाइनल स्मियर नहीं लिया गया बल्कि चिकित्सकीय परीक्षण के समय केवल वैजाइनल स्वाब लिया गया और वही रासायनिक विश्लेषण हेतु एफएसएल को रसीद (प्रद.पी-4) के साथ भेजा गया, लेकिन कोई एफएसएल रिपोर्ट रिकॉर्ड पर प्रस्तुत नहीं की गई। अतः रिकॉर्ड पर ऐसा कोई पुष्टिकारक साक्ष्य उपलब्ध नहीं है जिससे यह सिद्ध हो सके कि अभियोजिका 'एस' के साथ बलात्कार हुआ या उसके साथ हाल ही में यौन संबंध स्थापित किया गया।

16. उपर्युक्त पृष्ठभूमि को देखते हुए, अब अभियोजन पक्ष का पूरा मामला केवल अभियोजिका 'एस' (पीडब्ल्यू-2) के एकल साक्ष्य पर आधारित है।

17. वास्तव में, यह स्थापित विधि है कि न्यायालय अभियुक्त की दोषसिद्धि बलात्कार के मामलों में केवल अभियोजिका के साक्ष्य के आधार पर कर सकता है, यदि वह साक्ष्य विश्वसनीय और विश्वास योग्य पाया जाए। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि यह कोई विवेक का

नियम नहीं है कि प्रत्येक मामले में अभियोजिका के बयान की पुष्टि अनिवार्य है, तभी उस पर दोषसिद्धि आधारित की जाए, लेकिन विवेक के विषय में, पुष्टि की आवश्यकता न्यायालय के मस्तिष्क में अवश्य रहनी चाहिए, विशेषकर जब यह पाया जाए कि अभियोजिका कोई भी सच्ची बात नहीं बता रही है।

इस मामले में, अभियोजिका ने अपीलकर्ता द्वारा कथित कृत्य के बाद दो वर्ष तक मौन साधे रखा और उसने घटना के बारे में अपनी माँ को भी पहले बलात्कार की घटना के दो वर्ष बाद तक नहीं बताया। फिर दूसरी बार जब उसके साथ बलात्कार हुआ तब भी वह एक माह से अधिक समय तक मौन रही। इतना अधिक और लंबे समय तक मौन रहना अभियोजन पक्ष के मामले को संदिग्ध और अविश्वसनीय बनाता है।

18. उसके बयानों की पुष्टि चिकित्सा साक्ष्य से नहीं होती क्योंकि उसके निजी और शरीर के बाहरी हिस्सों पर चोट के कोई निशान नहीं पाए गए और अभियोजन पक्ष द्वारा अभियोक्ता 'एस' (पीडब्ल्यू-2) के साथ हाल ही में हुए यौन संबंध को स्थापित करने के लिए कोई एफएसएल रिपोर्ट भी पेश नहीं की गई।

19. एक समय, उसने आरोप लगाया है कि अपीलकर्ता ने उसकी माँ की मौजूदगी में उसके साथ यह घटना करने की कोशिश की जब वह सो रही थी। फिर भी उसने इस घटना के बारे में अपनी माँ को नहीं बताया। ऐसा आरोप बेहद असंभव प्रतीत होता है।

20. पूरा मामला अभियोजिका की माता 'आर' (पीडब्ल्यू-1) द्वारा दर्ज कराई गई रिपोर्ट पर आधारित है, और उन्होंने अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन नहीं किया एवं उन्हें शत्रु घोषित कर दिया गया। अतः अभियोजन पक्ष का मामला विश्वास योग्य नहीं है।

21. विचारण न्यायालय ने इस आधार पर कि नाबालिग पीड़िता ने पूरे अभियोजन कार्यवाही के दौरान अपना बयान बरकरार रखा और उसमें निरंतरता थी, केवल नाबालिग पीड़िता की एकमात्र गवाही एवं अभियुक्त की ओर से बचाव में किसी साक्ष्य के अभाव के कारण, अपीलकर्ता को दोषी ठहराया।

संबंधित मुद्दे पर निर्णयों की विधिक स्थिति :-

22. यह स्थापित विधि है, जिसे अनेक न्यायनिर्णयों द्वारा पुष्ट किया गया है कि दोषसिद्धि अभियोजिका की एकमात्र गवाही के आधार पर संभव है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कृष्ण कुमार मलिक बनाम हरियाणा राज्य, (2011) 7 एससीसी 130 में, इसी तथ्य को हाल ही में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय, गणेशन बनाम राज्य, पुलिस निरीक्षक द्वारा प्रतिनिधित्वित, (2020) 10 एससीसी 573 में दोहराया गया है, यह उल्लेखित किया है कि अभियुक्त को बलात्कार के अपराध में दोषी मानने के लिए अभियोजिका की एकमात्र गवाही पर्याप्त है; बशर्ते कि वह गवाही विश्वास उत्पन्न करने वाली, पूर्णतः विश्वसनीय, निष्कलंक और उच्च गुणवत्ता वाली प्रतीत होनी चाहिए।

23. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने राय संदीप @ दीपू बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली), (2012) 8 एससीसी 21 में इस बात का उल्लेख किया है कि “स्टर्लिंग विटनेस” किसे कहा जाता है। अनुच्छेद 22 में इसे इस प्रकार रखा गया है:—

“22. हमारी सुविचारित राय में, “उत्कृष्ट गवाह” बहुत उच्च गुणवत्ता और क्षमता वाला होना चाहिए, जिसका बयान अखंडनीय होना चाहिए। ऐसे गवाह के बयान पर विचार करने वाली अदालत को उसे बिना किसी हिचकिचाहट के उसके अंकित मूल्य पर स्वीकार करने की स्थिति में होना चाहिए। ऐसे गवाह की गुणवत्ता का परीक्षण

करने के लिए, गवाह की स्थिति अमूर्त होगी और जो प्रासंगिक होगा वह है ऐसे गवाह द्वारा दिए गए बयान की सत्यता। अधिक प्रासंगिक होगा बयान की शुरुआत से लेकर अंत तक, अर्थात्, उस समय जब गवाह प्रारंभिक बयान देता है और अंततः अदालत के समक्ष। यह स्वाभाविक और अभियोजन पक्ष के मामले के अनुरूप होना चाहिए अभियुक्त के रूप में। ऐसे गवाह के बयान में कोई झूठ नहीं होना चाहिए। गवाह को किसी भी अवधि की और चाहे वह कितनी भी कठिन क्यों न हो, जिरह का सामना करने में सक्षम होना चाहिए और किसी भी परिस्थिति में घटना के तथ्य, इसमें शामिल व्यक्तियों और उसके क्रम के बारे में किसी भी प्रकार के संदेह की गुंजाइश नहीं होनी चाहिए। इस कथन का अन्य सभी सहायक सामग्रियों जैसे की गई बरामदगी, इस्तेमाल किए गए हथियार, अपराध का तरीका, वैज्ञानिक साक्ष्य और विशेषज्ञ की राय के साथ सह-संबंध होना चाहिए। उक्त कथन को लगातार हर अन्य गवाह के कथन से मेल खाना चाहिए। यह भी कहा जा सकता है कि यह परिस्थितिजन्य साक्ष्य के मामले में लागू परीक्षण के समान होना चाहिए, जहाँ अभियुक्त को उसके विरुद्ध आरोपित अपराध का दोषी ठहराने के लिए परिस्थितियों की श्रृंखला में कोई भी गायब कड़ी नहीं होनी चाहिए। केवल तभी जब ऐसे गवाह का बयान उपरोक्त परीक्षण के साथ-साथ लागू होने वाले सभी 12 अन्य समान परीक्षणों को भी पूरा करता हो, तभी यह माना जा सकता है कि ऐसे गवाह को "उत्कृष्ट गवाह" कहा जा सकता है, जिसका बयान अदालत द्वारा बिना किसी पुष्टि के स्वीकार किया जा सकता है और जिसके आधार पर दोषी को दंडित किया जा सकता है। अधिक सटीक रूप से, अपराध के मूल स्पेक्ट्रम पर उक्त गवाह का बयान बरकरार रहना चाहिए, जबकि अन्य सभी संबंधित सामग्री, अर्थात् मौखिक, दस्तावेजी और भौतिक वस्तुएं, भौतिक विवरणों में उक्त बयान से मेल खानी चाहिए ताकि अपराध की सुनवाई कर रही अदालत, अन्य सहायक सामग्रियों को छांटने के लिए मूल बयान पर भरोसा कर सके और अपराधी को कथित आरोप का दोषी ठहराया जा सके।

24. रामदास बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2007) (2) एससीसी 170 के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि बलात्कार के मामले में दोषसिद्धि केवल अभियोजिका की गवाही के आधार पर की जा सकती है, लेकिन ऐसा तभी किया जा सकता है जब न्यायालय

अभियोजिका के कथनों की सच्चाई से पूरी तरह संतुष्ट हो और ऐसे कोई परिस्थितियाँ न हों जो उसकी विश्वसनीयता पर संदेह की छाया डालती हों। एफआईआर दर्ज कराने में आठ दिन की देरी संदेहास्पद पाई गई, अतः आरोपी को संदेह का लाभ दिया गया और निम्नलिखित टिप्पणियाँ, जो अनुच्छेद 23 से 25 में की गई हैं, इस प्रकार हैं:

“23. इसमें कोई संदेह नहीं कि बलात्कार के मामले में दोषसिद्धि केवल अभियोजिका की गवाही के आधार पर की जा सकती है, लेकिन ऐसा तभी किया जा सकता है जब न्यायालय अभियोजिका के कथनों की सच्चाई से पूरी तरह संतुष्ट हो और ऐसी कोई परिस्थितियाँ न हों जो उसकी सत्यता पर संदेह की छाया डालती हों। यदि अभियोजिका का साक्ष्य इतनी उच्च गुणवत्ता का हो कि उसके बयान के आधार पर दोषसिद्धि का आदेश टिक सके, तब उसकी गवाही पर्याप्त होगी। वर्तमान मामले में, हमें उसकी गवाही उतनी गुणवत्ता की प्रतीत नहीं होती।

24. राज्य के वकील ने दलील दी कि ऐसे मामलों में प्राथमिकी दर्ज करने में देरी महत्वहीन है। यह प्रस्ताव इतना व्यापक रूप से प्रस्तुत किया गया है कि इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्राथमिकी दर्ज करने में देरी अभियोजन पक्ष के मामले के लिए जरूरी नहीं कि घातक हो। हालाँकि, यह तथ्य कि रिपोर्ट देरी से दर्ज की गई थी, एक प्रासंगिक तथ्य है जिस पर अदालत को ध्यान देना चाहिए। इस तथ्य पर मामले के अन्य तथ्यों और परिस्थितियों के प्रकाश में विचार किया जाना चाहिए, और किसी दिए गए मामले में अदालत इस बात से संतुष्ट हो सकती है कि रिपोर्ट दर्ज करने में देरी को पर्याप्त रूप से समझाया गया है। साक्ष्य की समग्रता के प्रकाश में, अदालत को यह विचार करना होगा कि क्या रिपोर्ट दर्ज करने में देरी अभियोजन पक्ष के मामले पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। यह साक्ष्य के मूल्यांकन का विषय है। ऐसे मामले हो सकते हैं जहाँ देरी को स्पष्ट करने के लिए प्रत्यक्ष साक्ष्य मौजूद हों। प्रत्यक्ष स्पष्टीकरण के अभाव में भी, रिकॉर्ड में ऐसी परिस्थितियाँ दिखाई दे सकती हैं जो देरी के लिए एक उचित स्पष्टीकरण प्रदान करती हैं। ऐसे मामले भी होते हैं जहाँ घायलों को चिकित्सा सहायता के लिए अस्पताल ले जाने में बहुत समय लग जाता है और इसलिए, गवाहों को तुरंत रिपोर्ट

दर्ज कराने का समय नहीं मिल पाता। ऐसे मामले भी हो सकते हैं जहाँ डर और धमकियों के कारण गवाह तुरंत पुलिस स्टेशन जाने से बचते हैं। घटना का समय, पुलिस स्टेशन की दूरी, उपलब्ध परिवहन का साधन, ये सभी कारक रिपोर्ट दर्ज कराने में देरी के सवाल पर असर डालते हैं। ऐसे मामलों की कल्पना करना भी संभव है जहाँ पीड़ित और उसके परिवार के सदस्य समाज के ऐसे तबके से आते हैं कि उन्हें पुलिस को मामले की सूचना देने और कानूनी कार्रवाई करने के अपने अधिकार के बारे में भी पता नहीं होता, और न ही उन्हें ऐसी कोई सलाह उपलब्ध होती है। यौन अपराधों के मामले में एक और बात है जो अदालत के मन में विचारणीय हो सकती है, वह है पीड़िता का पुलिस को मामले की सूचना देने में शुरुआती हिचकिचाहट, जो उसके पारिवारिक जीवन और परिवार की प्रतिष्ठा को प्रभावित कर सकती है। बहुत बार ऐसे मामलों में, काफ़ी समझाने-बुझाने के बाद ही, अभियोक्ता को सही तथ्य बताने के लिए राजी किया जा सकता है। ऐसे मामले भी होते हैं जहाँ पीड़िता सही तथ्य बताने के बजाय अपमान सहना पसंद कर सकती है, जिससे उसके जीवन भर के लिए कलंक लग सकता है। ये ऐसे मामले हैं जहाँ अभियोक्ता द्वारा सही तथ्य बताने में शुरुआती हिचकिचाहट, रिपोर्ट दर्ज कराने में हुई देरी का एक अच्छा कारण हो सकती है। अंतिम विश्लेषण में, पुलिस के पास रिपोर्ट दर्ज कराने में देरी का क्या प्रभाव पड़ता है, यह सबूतों के मूल्यांकन का विषय है और अदालत को प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में देरी पर विचार करना चाहिए। अलग-अलग मामलों में अलग-अलग तथ्य होते हैं और सबूतों की समग्रता और अदालत के मन पर उसका प्रभाव महत्वपूर्ण होता है। ऐसे मामलों में कोई निश्चित सूत्र नहीं बनाया जा सकता और प्रत्येक मामले को अपने तथ्यों पर ही आधारित होना चाहिए। यह स्थापित कानून है कि परिस्थितियाँ चाहे कितनी भी समान क्यों न हों, एक मामले के तथ्यों को दूसरे मामले के तथ्यों पर निष्कर्ष निकालने के लिए मिसाल के तौर पर इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। (देखें एआईआर 1956 एससी 216: पांडुरंग और अन्य बनाम हैदराबाद राज्य)। इस प्रकार, रिपोर्ट दर्ज करने में केवल देरी अपने आप में अभियोजन पक्ष के मामले के लिए घातक नहीं हो सकती है, लेकिन देरी को प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में ध्यान में रखना होगा और यह तथ्य न्यायालय द्वारा साक्ष्य की जाँच का विषय है।

25. इस मामले में दो चश्मदीद गवाह हैं जिनसे अभियोजन पक्ष के मामले को साबित करने के लिए पूछताछ की गई है। हमने अभियोक्ता पक्ष-5 के साक्ष्य को पूरी तरह से खारिज कर दिया है। हमने अभियोक्ता पक्ष-2 के साक्ष्य की भी गहन जाँच की है। वह हमें ऐसी उत्कृष्ट गवाह नहीं लगती जिसकी एकमात्र गवाही के आधार पर दोषसिद्धि कायम रह सके। उसने अदालत से उन तथ्यों को छिपाने की कोशिश की है जो उसके द्वारा दर्ज की गई पूर्व प्राथमिकी के बारे में गवाही न देकर प्रासंगिक थे, जो पुलिस स्टेशन में दर्ज की गई साबित हुई है। उसने प्रथम सूचना रिपोर्ट में वर्णित मामले से केवल इसलिए ध्यान भटकाया है ताकि वह गैर-संज्ञेय अपराध से संबंधित अपनी पूर्व रिपोर्ट के लिए स्पष्टीकरण देने के बोझ से बच सके। रिपोर्ट दर्ज करने में देरी के सवाल पर उसका साक्ष्य असंतोषजनक है और अगर उसके बयान को वैसे ही लिया जाए, तो रिपोर्ट दर्ज करने में हुई अत्यधिक देरी का स्पष्टीकरण नहीं हो पाता। एक असंज्ञेय अपराध के संबंध में उनके द्वारा पहले दर्ज की गई रिपोर्ट के आलोक में विचार करने पर, कुछ दिनों बाद उनके द्वारा दर्ज की गई दूसरी रिपोर्ट इसकी सत्यता पर संदेह पैदा करती है।”

25. तुलिया काली बनाम तमिलनाडु राज्य के मामले में, जो एआईआर 1973 एससी 501 में प्रकाशित है, में माननीय शीर्ष न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि आपराधिक मामले में एफआईआर एक अत्यंत महत्वपूर्ण और मूल्यवान साक्ष्य का टुकड़ा है, जिसका प्रयोग विचारण में प्रस्तुत मौखिक साक्ष्य की पुष्टि के उद्देश्य से किया जाता है। अतः, एफआईआर दर्ज कराने में हुई देरी का संतोषजनक स्पष्टीकरण दिया जाना चाहिए। इस संबंध में निम्नलिखित टिप्पणी की गई है:

“अपराध के मामले में प्रथम सूचना रिपोर्ट विचारण में प्रस्तुत मौखिक साक्ष्य की पुष्टि के उद्देश्य से अत्यंत महत्वपूर्ण और मूल्यवान साक्ष्य का एक टुकड़ा है। अभियुक्त की दृष्टि से उक्त रिपोर्ट का महत्व शायद ही अत्यधिक बताया जा सकता है। अपराध के संबंध में पुलिस को रिपोर्ट तुरंत दर्ज कराने पर जोर देने का उद्देश्य यह है कि अपराध किन परिस्थितियों में घटित हुआ, वास्तविक अपराधियों के नाम तथा

उनकी भूमिका सहित वहां उपस्थित प्रत्यक्षदर्शी गवाहों के नाम प्रारंभिक सूचना में दर्ज हो सकें। प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराने में देरी बहुत बार आभूषणयुक्त विवरण का कारण बनती है, जो बाद में मन—मंथन और सलाह-मशविरा का परिणाम है। देरी के कारण, रिपोर्ट न केवल तात्कालिकता का लाभ खो देती है, बल्कि इसमें बाद में सोच-विचार कर रंगीन विवरण, बढ़ाचढ़ाकर बताई गई बातें या कृत्रिम/कृत्रिम रूप से गढ़ी गई कहानी शामिल हो जाने का भी खतरा पैदा हो जाता है। अतः यह अनिवार्य है कि पहली सूचना रिपोर्ट दर्ज कराने में हुई देरी का संतोषजनक स्पष्टीकरण अवश्य दिया जाना चाहिए।”

26. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय, तमीज़ुद्दीन @ तम्मू बनाम दिल्ली राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र) (2009) 15 एससीसी 566 में, यह प्रावधान किया था कि बलात्कार के मामले में, अभियोजन पक्ष के साक्ष्य को प्राथमिकता दी जानी चाहिए, लेकिन यह मानना कि इस साक्ष्य को स्वीकार किया जाना चाहिए, भले ही कहानी असंभाव्य हो और तर्क से परे हो, उन सिद्धांतों के साथ हिंसा होगी जो आपराधिक मामले में साक्ष्य की सराहना को नियंत्रित करते हैं। वर्तमान मामले में, विसंगतियां घटना के तथ्य पर संदेह पैदा करती हैं, और बाल पीड़ित द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य उत्कृष्ट गुणवत्ता का नहीं है।

27. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय, अमन कुमार बनाम हरियाणा राज्य, (2004) 4 एससीसी 379 में यह उल्लेखित किया:

"यह सर्वविदित है कि बलात्कार के अपराध की पीड़ित होने की शिकायत करने वाली अभियोक्ता, अपराध के बाद सह-अपराधी नहीं है। ऐसा कोई कानूनी नियम नहीं है कि उसकी गवाही भौतिक विवरणों की पुष्टि के बिना नहीं ली जा सकती। वह एक घायल गवाह से ऊँचे स्थान पर है। बाद वाले मामले में, शारीरिक रूप से चोट पहुँचती है, जबकि पहले वाले मामले में यह शारीरिक के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक भी है। हालाँकि, यदि तथ्यों की अदालत को अभियोक्ता के बयान को उसके प्रत्यक्ष रूप में स्वीकार करना मुश्किल लगता है,

तो वह प्रत्यक्ष या परिस्थितिजन्य साक्ष्य की तलाश कर सकती है, जो उसकी गवाही को विश्वास दिला सके।”

28. नाबालिग गवाह (पीडब्ल्यू-2 'एस') की एकमात्र गवाही विश्वास उत्पन्न नहीं करती। यदि पुष्टि हेतु कोई गवाह या चिकित्सकीय साक्ष्य नहीं है तो अपीलकर्ता-अभियुक्त द्वारा अपराध किए जाने के विषय में उचित संदेह उत्पन्न होता है। इस न्यायालय का मत है कि गवाहों के बयानों में जो असंगतियाँ हैं एवं उपर्युक्त कमियाँ अभियोजन पक्ष के मामले पर संदेह की छाया डालती हैं, और अपीलकर्ता की संलिप्तता आवश्यक संदेह से परे सिद्ध नहीं होती।

29. रिकॉर्ड का साधारण अवलोकन और अभियोजिका 'एस' (पीडब्ल्यू-2) के बयान यह दर्शाते हैं कि उसने तीन अलग-अलग घटनाक्रम बताये हैं, जो अलग-अलग समय पर घटित हुए— अर्थात् दो वर्ष पूर्व, एक माह पूर्व और कुछ दिन पूर्व। किंतु एफआईआर दर्ज करने में हुई अत्यधिक देरी अभियोजन द्वारा स्पष्ट नहीं की गई, जिससे पूरे अभियोजन पक्ष के मामले पर संदेह की छाया पड़ती है।

30. एफआईआर दर्ज करने में दो साल से ज़्यादा की देरी, अभियोक्ता 'एस' (पीडब्ल्यू-2) द्वारा अपनी माँ 'आर' (पीडब्ल्यू-1) या किसी को भी दो साल तक बार-बार बलात्कार की घटनाओं के बारे में न बताना, अभियोक्ता के गुसांगों और शरीर के बाहरी हिस्सों पर चोट या हिंसा के कोई निशान न होना, एफएसएल रासायनिक रिपोर्ट के अभाव में हाल ही में हुए यौन संबंध के सबूतों का न होना, घटनास्थलों का साइट प्लान न तैयार करना और अभियोक्ता की माँ द्वारा अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन न करना, पूरी अभियोजन कहानी पर गंभीर संदेह पैदा करता है।

31. उपर्युक्त विश्लेषण के आलोक में यह पाया गया है कि विचारण न्यायालय ने रिकॉर्ड पर उपलब्ध भौतिक साक्ष्य का समुचित मूल्यांकन नहीं किया। अभियोजन पक्ष अपीलकर्ता के विरुद्ध उचित संदेह से परे अपना मामला सिद्ध करने में असफल रहा है।

निष्कर्ष:-

32. उपर्युक्त चर्चा के आलोक में, अपीलित निर्णय टिकाऊ नहीं पाया गया और उसे निरस्त किया जाना उपयुक्त है, अतः उसे निरस्त और समाप्त किया जाता है। अपील स्वीकार की जाती है। संदेह का लाभ देते हुए अपीलकर्ता को दोषमुक्त किया जाता है।

33. अपीलकर्ता जमानत पर है। उसके जमानत बांड निरस्त किये जाते हैं।

34. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437-ए के प्रावधान को ध्यान में रखते हुए, अपीलकर्ता को निर्देशित किया जाता है कि वह विचारण न्यायालय के समक्ष एक माह की अवधि के भीतर 1,00,000/- रुपये का व्यक्तिगत मुचलका तथा दो-दो जमानतदार, प्रत्येक 50,000/- रुपये के, प्रस्तुत करें, जो छह माह की अवधि तक प्रभावी रहेगा, ताकि यदि इस निर्णय के विरुद्ध विशेष अनुमति याचिका प्रस्तुत की जाती है अथवा अनुमति प्रदान की जाती है, तो नोटिस प्राप्त होते ही अपीलकर्ता सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष उपस्थित हो सके।

35. विचारण न्यायालय का अभिलेख अविलंब वापस भेजा जाए।

निर्देश:-

36. राजस्थान राज्य के पुलिस महानिदेशक (डीजीपी) यह सुनिश्चित करेंगे कि अन्वेषण अधिकारियों के आचरण की जांच करवाई जाए। यह बताने की आवश्यकता नहीं कि संबंधित

अधिकारियों को पर्याप्त सुनवाई का अवसर देते हुए, उनके विरुद्ध समुचित कार्रवाई विधि के अनुसार की जाएगी।

37. इस आदेश/न्यायादेश की एक प्रति आवश्यक कार्रवाई एवं अनुपालना हेतु राजस्थान राज्य के पुलिस महानिदेशक (डीजीपी) को प्रेषित की जाए।

(अनूप कुमार ढांड), ज

एमआर-637/सप्प

"अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी अधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।"



Tarun Mehra

Advocate